Volume-3, No. I, Feb-2016, pp. 67-72

भारतीय विदेश नीतिः अमरीका से संबंधों का बदलता स्वरूप

डॉ0 दानवीर सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर
राजनीति विज्ञान विभाग,
एस0 डी0 (पी.जी.) कॉलेज मुजफ्फरनगर (उ0प्र0) भारत।

सार

भारत और अमरीका के संबंधों के विषय में अध्ययन करने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम विदेश नीति की सैद्धान्तिक रूपरेखा को समझ लें। आज कोई भी देश आत्मनिर्भर नहीं है। राज्यों की एक दूसरे पर निर्भरता निरन्तर बढ़ती जा रही है। उससे पहले भी राज्यों में विभिन्न प्रकार के आपसी संबंध हुआ करते थे। इनमें व्यापारिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक संबंध विशेष रूप से सम्मिलित है। व्यक्तियों की भाँति राज्य भी अपने हितों की अभिवृद्धि का निरन्तर प्रयास करते रहते हैं। राज्यों के इन हितों को राष्ट्रीय हित कहते हैं। प्रत्येक देश अपने राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा एवं अभिवृद्धि के लिए कुछ नीतियाँ निर्धारित करता है जिसका संबंध अन्य देशों के आचरण तथा उनके साथ संबंधो से होता है, विदेश नीति कहलाती है।

मुख्य शब्द– विदेश नीति, भारत अमेरिका सम्बन्ध, शास्त्री काल, इन्दिरा काल, जनता सरकार काल।

राज्यों की सरकार यह निश्चित करती है कि विदेशों के साथ किस प्रकार के संबंध रखे जाए। इस प्रकार सरकारें दूसरी सरकारों के प्रति अपना आचरण तय करती है। प्रोफेसर महेन्द्र कुमार ने विदेश नीति के संबंध में लिखा है– ''इस आचरण के अध्ययन को मोटे तौर पर, विदेश नीति की विषय–वस्तु कहा जा सकता है। प्रत्येक राज्य का व्यवहार अन्य देशों के व्यवहार को प्रभावित करता है। अपने राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखते हुए, प्रत्येक देश अन्य देशों की गतिविधियों का अधिकतम लाभ उठाना चाहता है। इस प्रकार विदेशनीति का प्रमुख उद्देश्य यह होता है कि नीति निर्धारित करने वाला देश अन्य देशों के व्यवहार में अपने हित के अनुसार परिवर्तन करवाने का प्रयास करें।''[1] श्लाइचर (Scleicher) ने विदेश नीति की परिभाषा इस प्रकार की है–

''इस का आशय सरकारी प्रतिनिधियों के उन व्यवहारों से है जिसके द्वारा अपने राष्ट्र की सीमा के बाहर के मानवीय व्यवहार को प्रभावित किया जा सके।''[2] जॉर्ज मॉडेल्सकी (George Modelski) ने भी विदेश नीति की परिभाषा देते हुए लिखा है–''विदेश नीति उन क्रियाकलापों का समुच्चय है जो किसी समुदाय ने अपने राज्यों का व्यवहार बदलने के लिए और अपने क्रियाकलापों को अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति के साथ समायोजित करने के लिए विकसित किया था।''[3] विदेश नीति की उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि राष्ट्रों की व्यवहार प्रक्रिया ही विदेश नीति का सार है।

विदेश नीति राज्य की गतिविधियों का एक व्यवस्थित रूप है जिसका विकास राज्य के द्वारा अपने दीर्घकालीन अनुभव के आधार पर किया जाता है तथा जिसका उद्देश्य दूसरे राज्यों के व्यवहार को अपने हितों के अनुरूप परिवर्तित करना है। लेकिन यदि यह सम्भव न हो तो अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का आंकलन करते हुए अपने व्यवहार में स्वयं परिवर्तन लाना है जिससे अन्य राज्यों के व्यवहार तथा क्रियाकलापों के साथ सामंजस्य स्थापित हो सके। विदेश नीति का निहितार्थ यह है कि राज्य की विदेश नीति के कई उद्देश्य होते है, जैसे–सुरक्षा और एकता को बनाए रखना, राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरों को दूर करना, आर्थिक हितों को बढ़ावा देना, राष्ट्रीय शक्ति का विकास करना जिससे राष्ट्रीय प्रतिष्ठा में वृद्धि हो सके, राजनीतिक व्यवस्था को सुदृढ़ करना और अन्य देशों में उसके निर्यात की इच्छा करना, एक नई अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के उदय और उसे सुदृढ़ किए जाने के प्रयास करना आदि। इन सभी उद्देश्यों का समुच्चय देश का राष्ट्रीय हित होता है। इसकी रक्षा और संवर्धन करने हेतु लिए गए सभी निर्णय उसकी विदेश नीति के अन्तर्गत आते है, जबकि उनके कार्यान्वयन और जोड़–तोड़ की कला कूटनीति कहलाती है अर्थात जिस राष्ट्रीय हित के आवश्यक संघटन सुरक्षा, राष्ट्रीय विकास और विश्व व्यवस्था में निहित है, वह किसी देश की विदेश नीति की नींव है।[4]

भारत की विदेश नीति के निर्माण में भी उन्हीं तत्वों का प्रभाव पड़ा जो अन्य देशों की विदेश नीति में प्रभाव डालते है। ऐसे तत्वों में कुछ स्थिर होते है और बाह्य परिवर्तनीय कारक होते है। साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद व नस्लवाद का विरोध, गुटनिरपेक्षता, विश्वशांति, अफ्रो–एशियाई एकता का आह्वान और संयुक्त राष्ट्र संघ के सिद्धान्तों में आस्था आदि भारतीय विदेश नीति की नींव के पत्थर है। प्रो0 एम0

ब्रेचर इस वर्ग में भूगोल, बाह्य पर्यावरण, व्यक्तित्वों, आर्थिक एवं सैन्य स्थिति व जनमत को सम्मिलित करते है जबकि डॉ0 रोजेनी इस विषय के महान अध्येता पारस्परिक संबंधों, महाशक्ति संरचना, राजनीतिक संस्थाओं, आंतरिक एवं बाह्य स्थिति जैसे आदि कारकों की ओर संकेत करते है।[5]

भारत की विदेश नीति के निर्माता पं0 जवाहरलाल नेहरू थे जिन्होंने स्वंतत्रता प्राप्ति के पश्चात् घोर कठिनाइयों का सामना करते हुए भारत की विदेश नीति के राष्ट्रीय हितों का पोषण और संवर्धन किया। स्वंतत्रता प्राप्ति के प्रारम्भिक वर्षो में भारत जिस प्रकार एक गुटनिरपेक्ष देश था, आज भी है। भारतीय विदेश नीति के मौलिक तत्व आज भी वही है, जो पहले थे। अन्तर केवल इतना आया है कि नेहरूयुग के प्रारम्भ में आदर्शवाद पर बल रहा और फिर यर्थाथवाद पर। अब भारतीय विदेश नीति में आदर्शवाद तथा यथार्थवाद का सुन्दर समन्वय देखा जा सकता है।

भारतीय विदेश नीति एवं विश्वव्यापी सरोकारों को लक्षित करती है। इसके निर्माण में प्राचीन भारतीय परम्परा और स्वाधीनता संग्राम के आदर्शों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। भारतीय विदेश नीति का उदय किसी आकस्मिक घटना का परिणाम नहीं है बल्कि इतिहास की उपज है।[6]

भारत और अमरीका विश्व के दो महान लोकतांत्रिक राष्ट्र है। अतः दोनों में घनिष्ठ संबंध विश्व में लोकतांत्रिक शक्तियों को सुदृढ़ करने के लिए आवश्यक है। भारत और अमरीका के संबंध काफी उतार–चढ़ाव के रहे हैं। दोनों देशों के संबंधो के बदलते स्वरूप का विवेचन इस प्रकार है–

नेहरू युग में भारत–अमरीकी संबंध (1947–1964) :

एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में भारत का उदय होने के बाद से ही अमरीकी विदेश नीति का यह मुख्य उद्देश्य रहा है कि भारत को अपने शिविर में लाया जाए और इसके लिए 'दबाव तथा सहायता' की नीति अपनाई गई। जब दिसम्बर, 1947 में कश्मीर पर पाकिस्तान के आक्रमण का प्रश्न संयुक्त राष्ट्र संघ में ले जाया गया जो अमरीका ने पाकिस्तान का पूर्ण समर्थन किया। अमरीकी नीति के परिणाम स्वरूप ही कश्मीर के प्रश्न का संतोषजनक समाधान अभी तक नहीं हो सका है। इसी प्रकार जब साम्यवादी चीन का उदय हुआ तो अमरीका ने भारत पर दबाव डाल कि वह चीन को मान्यता न दे, किन्तु भारत ने अपनी स्वतंत्र निर्णय शक्ति का उपयोग करते हुए दिसम्बर, 1949 में चीन को मान्यता दे दी। समय–समय पर दोनों देशों के दृष्टिकोण में परिवर्तन होते रहे। आरम्भ में अमरीका ने भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति को सराहने योग्य नहीं पाया, सोवियत संघ को भी वह उचित नहीं लगी थी। दोनों महाशक्तियाँ भारत को विरोधी गुट से संबद्ध मानती रहीं। परन्तु, जब भारत ने 27 जून, 1950 के सुरक्षापरिषद् के उस प्रस्ताव को स्वीकार किया जिसमें उत्तरी कोरिया को दक्षिण कोरिया के विरूद्ध आक्रामक घोषित किया गया था, तब अमरीका ने भारत के निर्णय की सराहना की और सोवियत संघ को यह निन्दनीय लगा था। कुछ समय पश्चात् जब संयुक्त राष्ट्र की सेवाओं ने दक्षिण कोरिया से उत्तरी कोरिया को बाहर निकाल दिया और जनरल मैक्आर्थर ने चीन की ओर सेनाओं को कूच करवा दिया, तब भारत ने उस अमरीकी सेनापति की निन्दा की। अचानक सोवियत संघ भारत का प्रशंसक हो गया, और अमरीका को यह अच्छा नहीं लगा।[7]

हिन्द–चीन की समस्या पर भी दोनों देशों के दृष्टिकोण में मौलिक अन्तर रहा है। जब भारतीय संसद में पं0 नेहरू ने हिन्द–चीन की समस्या के समाधान के लिए छह सूत्रीय प्रस्ताव रखें तो अमरीका में इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। फिर जेनेवा सम्मलेन के बाद अमरीका ने दक्षिणी एशियाई संगठन स्थापित किया तो भारत ने इसका कड़ा विरोध किया। भारत के इन दृष्टिकोणों के कारण अमरीकी प्रशासन भारत से रुष्ट हो गया। सन् 1951 में प्रधानमंत्री पं0 नेहरू अमरीका गए और उनकी यात्रा से दोनों देशों के संबंधो में कुछ सुधार हुआ। मई, 1954 में भारत में अमरीका के प्रति बहुत अधिक क्षोभ फैला जब उसने पाकिस्तान के साथ एक सैनिक सन्धि कर उसे भारी सैनिक सहायता देना शुरू किया। 1965 और 1971 के युद्धों ने भारत की इस आशंका को भली प्रकार सत्य सिद्ध कर दिया था। सन् 1954 में पाकिस्तान को सीएटो और सेण्टों का सदस्य बना लिया। पं0 नेहरू ने इसका घोर विरोध किया। पं0 नेहरू ने टू्मैन–सिद्धान्त तथा आइजनहॉवर सिद्धान्त की कटु आलोचना करके अमरीका को नाराज कर दिया।[8]

1962 में चीन के साथ सैनिक मुठभेड़ के दौरान भारत को सहायता की कीमत वसूल करने के अमरीकी प्रयत्नों ने भारत को खिन्न किया। राष्ट्रपति कैनेडी के समय में गोवा के प्रश्न पर भारत–अमरीकी संबंधो में काफी कटुता आ गई थी। राष्ट्रपति आइजनहावर की भारत यात्रा के फलस्वरूप दोनों देशों के मध्य जो कटुता तथा वैमनस्य उत्पन्न हो गया था, वह दूर हुआ। राष्ट्रपति आइजनहावर ने 4 मई, 1960 को वाशिंगटन में भारत के खाद्यमंत्री एस0के0 पाटिल के साथ एक समझौते पर हस्ताक्षर किए। नेहरू युग में अमरीका ने भारत के साथ दोहरी नीति अपनाई, परन्तु भारत अमरीकी संबंधो में आए उतार–चढ़ाव के होते हुए भी, गुटनिरपेक्षता की नीति पर अड़िग बना रहा।

शास्त्रीकाल में भारत–अमरीकी संबंध (1964–65)

पं0 जवाहर लाल नेहरू की मई, 1964 में मृत्यु के पश्चात् लाल बहादुर शास्त्री प्रधानमंत्री बने। विदेश नीति में उनका विशेष अनुभव न होने के बावजूद भी उनके नेतृत्व में भारत ने न केवल दृढ़ता से गुटनिरपेक्षता का पालन किया, बल्कि भारत–पाक युद्ध में पाकिस्तान को निश्चित रूप से भी पराजित किया। शास्त्री जी के 18 महीने के संक्षिप्त शासन काल में अमरीका के साथ संबंध कुछ खराब ही हुए। विदेश मंत्री के रूप में सरदार स्वर्ण सिंह ने शास्त्री सरकार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसी अवधि में, अमरीका ने उत्तरी वियतनाम पर भारी बम वर्षा करना प्रारम्भ कर दिया। भारत ने अमरीका की कटु आलोचना की जिसके कारण अमरीका में भारत के विरूद्ध तीव्र प्रतिक्रिया हुई। इसी प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप अमरीकी राष्ट्रपति जॉनसन ने शास्त्री को अमरीका यात्रा (जो मई, 1965 के लिए प्रस्तावित थी) के निमंत्रण को यह कहकर रद्द कर दिया कि वह व्यस्तता के कारण भारतीय प्रधानमंत्री की यात्रा के कार्यक्रम को पूरा नहीं कर सकेंगे। जिसे भारत ने बहुत गम्भीरता से लेते हुए अपना अपमान समझा।

पहले कच्छ के रन में और फिर 1965 के भारत–पाक युद्ध में पाकिस्तान द्वारा शस्त्रास्त्रों के प्रयोग से भारत–अमरीकी संबंधो में अधिक कटुता आ गई। 1965 में भारत–पाक युद्ध के दौरान अमरीका ने अपने 6 जहाजों, जिनमें भारत के लिए रक्षा सामग्री थी, भारतीय तट से मात्र 15 मील की दूरी पर लौटा दिया। यही नहीं, अमरीका ने न तो पाकिस्तान को अमरीका सैन्य सामग्री का भारत के विरूद्ध प्रयोग करने से रोका और न उसकी इस कार्यवाही की निन्दा की। इसके बावजूद, दोनों देशों में संबंधों में सुधार के प्रयास जारी रहे और इसके कुछ सुपरिणाम भी दृष्टिगोचर हुए। एक तो अमरीका ने यह निर्णय लिया कि भारत को खाद्यान्न की सहायता पुनः चालू की जाएगी और दूसरे अमरीका ने ताशकन्द सम्मेलन को आघात पहुंचाने की कोई कार्यवाही नहीं की।[9]

श्रीमती इन्दिरा गांधी के काल में भारत–अमरीका संबंध (1965–1977) :

10 जनवरी, 1966 को शास्त्री जी की मृत्यु के बाद श्रीमती इन्दिरा गांधी भारत की प्रधानमंत्री बनी। तब तक भारत अमरीका संबंध एक नाजुक असामान्य स्थिति तक पहुंच चुके थे। सत्ता ग्रहण करने के बाद श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भारतीय विदेश नीति की रूपरेखा स्पष्ट की। 1966 की अमरीका यात्रा भारत–अमरीकी संबंध सुधारने की दिशा में एक कठोर और महत्वपूर्ण कदम था। उस समय की अंतर्राष्ट्रीय स्थिति, अमरीका सोवियत संघ का तनाव–शैथिल्य, चीन–सोवियत मतभेद, चीन के प्रति भारत और अमरीका दोनों का रोष, अमरीका द्वारा प्रस्तावित आर्थिक और सैन्य सहायता इत्यादि ऐसे तत्व थे जिनके रहते अमरीका के साथ दीर्घकालीन मैत्री की अपेक्षा की जा सकती थी। अमरीकी दबाव के कारण 1966 में भारत को अपने रूपये का अवमूल्यन करना पड़ा।

उस समय जिन मुद्दों पर भारत और अमरीका के संबंधों में तनाव बना रहा उनमे प्रमुख थे : पाकिस्तान को अमरीकी शस्त्रास्त्रों की आपूर्ति, पश्चिम एशिया संघर्ष तथा वियतनाम युद्ध में अमरीका की भूमिका। भारत और अमरीका के दृष्टिकोण में, विशेषकर एशिया के संदर्भ में, तथा सामान्य रूप से विकासशील देशों के संदर्भ में तीव्र मतभेद बने रहे। चाहे वह कश्मीर का प्रश्न हो, या हिन्द महासागर का, उपनिवेशवाद समाप्ति का प्रश्न हो, या फिर नई अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था का, दोनों देश एक दूसरे से असहमत रहे। दक्षिण एशिया, दक्षिण पूर्व एशिया, पश्चिम एशिया तथा अफ्रीका सभी के संबंध में भारत और अमरीका के दृष्टिकोण परस्पर विरोधी बने रहे।[10]

फरवरी, 1972 में अमरीकी राष्ट्रपति निक्सन चीन यात्रा पर गए और वहां भारत की आलोचना की। निक्सन–चाऊ वर्ता के संबंध में श्रीमती गांधी ने चेतावनी दी थी कि यदि अमेरिका और चीन ने एशिया के भविष्य के बारे में कोई निर्णय लिया, तो उसे अन्य एशियाई देश स्वीकार नहीं करेंगे। अगस्त, 1974 में निक्सन के स्थान पर जेराल्ड फोर्ड अमरीका के राष्ट्रपति बने और यह आशा की गई कि वह भारत के प्रति सहयोग और मैत्री की नीति अपनाएगा। परन्तु कुछ समय में ही आशा निराशा में बदल गई जब फरवरी, 1975 में अमरीका ने पाकिस्तान को हथियार देने की निश्चित घोषणा कर दी। अनेक मतभेदों के बावजूद दोनों देशों के बीच यात्राओं का क्रम जारी रहा।

18 मई, 1974 को जब भारत ने पोखरण में आणविक विस्फोट किया, तो अमरीका सहित पश्चिम देशों की बहुत प्रतिकूल प्रतिक्रिया हुई। इससे भी दोनों देशों के बीच तनाव में वृद्धि हुई। 1975 में आपात काल की घोषणा ने भारत में जनतंत्र को मानवधिकार हनन के प्रश्न से जोड़ दिया और अमरीकी एडवर्ड कैनेडी जैसे पारम्परिक मित्र भी इन्दिरा गांधी के कटु आलोचक बन गए। अमरीका में टी0एन0कौल के दंभी आचरण ने भी भारत की छवि को नुकसान पहुँचाया। दोनों देशों के संबंधों में रचनात्मक सुधार की प्रक्रिया 1976 में भी बढ़ी और समझौते एवं सहयोग वृद्धि के प्रयत्न जारी रहे। वास्तव में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अंतर्राष्ट्रीय जटिलताओं को परखकर भारतीय विदेश नीति के आदर्श वादी सिद्धान्तों की रक्षा करते हुए

उसे पूर्व की तुलना में अधिक व्यावहारिक, सुदृढ़ व आत्मविश्वास से पूर्ण बनाया।

जनता सरकार के काल में भारत–अमरीकी संबंध (1977–1980) :

अमरीका ने भारत में शांतिपूर्ण लोकतंत्रात्मक तरीके से निष्पक्ष और मुक्त चुनाव द्वारा सत्ता परिवर्तन का स्वागत करते हुए नए प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई को अमेरीकी–सहयोग का आश्वासन दिया। प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने भी सोवियत संघ की ओर झुकी हुई भारतीय विदेश नीति में परिवर्तन करते हुए 'विशुद्ध असंलग्नता' की नीति अपनाए जाने की वकालत की। मई, 1977 में भारतीय वित्तमंत्री एच0एम0 पटेल ने अमरीका की यात्रा की जिसमें अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के माध्यम से भारत को अमरीकी सहायता के संकेत मिले।

अमरीका ने एक तरफ पाकिस्तान को ए–7 बमवर्षक देने की घोषणा की तथा दूसरी तरफ भारत को दी जाने वाली यूरेनियम की सप्लाई को हटा लिया। जनवरी, 1978 को अमरीकी राष्ट्रपति कार्टर भारत आए। इस यात्रा से भारत–अमरीकी द्विपक्षीय संबंध, व्यापार, सांस्कृतिक आदान–प्रदान और विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में सहयोग के माध्यम से निरन्तर विकसित होते रहे।

जून, 1978 में मोरारजी देसाई और विदेश मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अमरीका यात्रा की। इस अवसर पर जारी संयुक्त विज्ञप्ति पर हस्ताक्षर करते हुए कहा गया कि विश्वशांति के लिए हथियारों की होड़ रोकने हेतु प्रभावशाली उपाय किए जाने चाहिए। साथ ही सहमति व्यक्त की कि जनवरी, 1978 में राष्ट्रपति कार्टर की भारत–यात्रा के समय संयुक्त घोषणा पत्र में जिन समान सिद्धान्तों का उल्लेख किया गया था उनके आधार पर दोनों पक्षों के संबंधों को जारी रखना और बढ़ाना चाहिए। विदेश मंत्री वाजपेयी जी ने 20–25 अप्रैल, 1979 में अमरीका की यात्रा की। वे भारत–अमरीकी संयुक्त आयोग की चौथी बैठक में भाग लेने गए थे। विभिन्न क्षेत्रों में दोनों पक्षों द्वारा सहयोग का विस्तार कर संबंधो को सुधारने के प्रयास किए गए।

भारत–अमरीकी संबंध (1980 के उपरांत) :

श्रीमती इन्दिरा गांधी द्वारा जनवरी, 1980 में पुनः सरकार बनाने के उपरांत भारत और अमरीका संबंधो में सुधार के लिए अनेक प्रयत्न किए गए। जनवरी, 1980 के प्रारम्भ में संयुक्त राष्ट्र महासभा में भाग लेने के लिए अमरीका की यात्रा के समय तत्कालीन विदेश मंत्री पी0वी0 नरसिम्हाराव ने अमरीका के विदेश मंत्री एमंड मस्की से विचार–विमर्श किया। 27 जुलाई, 1982 को श्रीमती इन्दिरा गांधी 9 दिन की अमरीका यात्रा पर गई। इस यात्रा से दोनों देशों के संबंधो में कुछ कटुता कम हुई। इस यात्रा के परिणामस्वरूप अमरीका इस बात के लिए सहमत हो गया कि तारापुर परमाणु बिजलीघर के लिए फ्रांस ईंधन की सप्लाई भारत को करेगा, लेकिन अनेक मामलों जैसे–अमरीका द्वारा पाकिस्तान को सैनिक सहायता देने, हिन्द महासागर में डियागो गार्सिया के नौ–सैनिक अड्डों का विस्तार जैसे प्रश्नों पर दोनों देशों के बीच मतभेद बने रहे।[11] 1984 में राजीव गांधी द्वारा भारत की बागडोर सम्भालने के बाद भी भारत–अमरीका संबंधो में कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं आया। भारत ने बदले परिप्रेक्ष्य में अपनी विदेश नीति में कुछ परिवर्तन किए।

प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह और चन्द्रशेखर (दिसम्बर 1989 से जून, 1991) लगभग डेढ वर्ष तक प्रधानमंत्री रहे। जून, 1989 में अमरीका ने सुपर– 301 के तहत भारत के खिलाफ लगाए जाने वाले आर्थिक प्रतिबंधो की धमकी ने दोनों देशों के संबंधो में कटु तनाव को जन्म दिया। किन्तु जुलाई, 1990 में अमरीका ने आश्वासन दिया कि उरूग्वे चक्र की वार्ता तक वह भारत के खिलाफ कोई कार्यवाही नहीं करेगा। जून, 1991 में नरसिंहराव सरकार के सत्तारूढ़ होने के बाद भारत ने अर्थव्यवस्था को और उदार बनाया। प्रधानमंत्री नरसिंहराव ने 1994 में 15 से 19 मई के बीच अमरीका की यात्रा की। कुछ जटिल मामलों में खुले आम मतभेद दिखाने के बावजूद इस यात्रा को सफल बनाने की दोनों पक्षों ने कोशिश की। अमरीकी प्रशासन ने यह स्पष्ट किया कि नाभिकीय प्रसार निषेध मसला उनकी वार्ता सूची में सबसे ऊपर था।[12] जबकि भारतीय पक्ष ने स्पष्ट किया कि यह मुद्दा नहीं था।[13] राव का मुद्दा राजनीतिक व आर्थिक दोनों था।

17 मई को प्रधानमंत्री ने ग्रेटर हाउस्टन पार्टनरशिप के तत्वाधान में आयोजित हाउस्टन में प्रमुख व्यापार प्रतिनिधियों के सामने भाषण देते हुए कहा कि 'यहाँ मैं आपको व्यक्तिगत रूप से निमंत्रण देने आया हूँ कि आप भारत में पूंजी निवेश करें और भारत के विकास में भागीदार बनने का सम्मान प्राप्त करें।' उन्होंने कहा कि 'हमारी अर्थव्यवस्था में पूंजी निवेश से' भारत तथा अमरीकी दोनो उद्योग लाभान्वित होंगे।[14] अमरीका–भारत का सबसे बड़ा व्यापार भागीदार रहा। भारतीय निर्यातों की उसकी भागीदारी 18.5 प्रतिशत और अपने आयातों के लिए 11.5 प्रतिशत रही। खाड़ी संकट के दिनों में भारत ने आंतरिक राजनीतिक के दबाव में अमरीकी विमानों को ईंधन भरने से रोका जिसे अमरीका ने पसंद नहीं किया। खाड़ी युद्ध के समय भारत की विदेश नीति निर्णायक नहीं रही जिसकी पश्चिमी एशियाई देशों को आशा थी।[15]

जून, 1996 में संयुक्त मोर्चा की सरकार एच0डी0 देवगौडा के नेतृत्व में गठित हुई जिसमें इन्द्रकुमार गुजराल विदेश मंत्री नियुक्त हुए। इन्द्रकुमार गुजराल ने विदेश नीति नियोजन का दायित्व ग्रहण करते ही अमरीका से संबंधों में सुधार की बात की। उन्होंने कहा कि भारत का सी0टी0बी0टी0 पर जो रूख है उससे पूरे संबंधों पर हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए और अमरीका ने भी ऐसा कोई संकेत नहीं दिखलाया कि वे अपने आर्थिक संबंधों में कमी इसलिए नहीं लाएंगे क्योंकि भारत निरस्त्रीकरण सम्मेलन में संधि के दस्तावेज पर हस्ताक्षर न करके विशेषाधिकार का प्रयोग कर रहा है।[16] इन्द्रकुमार गुजराल के भारत के प्रधानमंत्री बनने के पश्चात् जून, 1997 में भारत तथा अमरीका के बीच एक महत्वपूर्ण प्रत्यर्पण संधि पर हस्ताक्षर हुए। इस सन्धि के अन्तर्गत दोनों ही देश एक दूसरे के द्वारा वांछित ऐसे भगोड़े अभियुक्तों तथा अपराधियों का प्रत्यर्पण करेंगे जो एक वर्ष से अधिक की सजा पाने की पात्रता रखते हों, चाहे उनकी नागरिकता किसी देश की क्यों न हो।

अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में बनी भाजपा गठबन्धन की सरकार द्वारा अपनाई गई परमाणु नीति से अमरीकी प्रशासन चिंतित रहा है। भारत ने 11 तथा 13 मई, 1998 को सफल परमाणु परीक्षण करके आणविक शक्ति बनने के अपने अडिग निश्चय को प्रकट कर दिया तो अमरीकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने कठोर आर्थिक प्रतिबंध लगा दिए। अमरीका ने पी–5 तथा जी–8 की बैठकों में परीक्षणों की आलोचना करने में पहल की। कारगिल युद्ध की परिणति में भारत–अमरीकी संबंधों में कुछ सुधार हुआ। वर्ष 2000 भारतीय विदेश नीति का अब तक का स्वर्णकाल कहा जा सकता है। जब मार्च, 2000 में अमरीकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने भारत यात्रा के दौरान तमाम ऐसे समझौते समानता के आधार पर किए, जिससे यह साबित हो गया कि अमरीका ने भारत को औपचारिक रूप से महाशक्ति भले न स्वीकार किया हो, उसने दक्षिण एशिया में ही नहीं सम्पूर्ण एशिया में भारत को एक ऐसे सन्धि स्थल के रूप में स्वीकार कर लिया है जो चीन की बढ़ती शक्ति को नियंत्रित करने में उसकी मद्द कर सकता है, दूसरी और उसने पाकिस्तान को अपने अग्रिम पंक्ति के मित्र के दर्जे से नीचे गिरा दिया है। यह भारतीय विदेश नीति की बड़ी उपलब्धि मानी जा सकती है।

डॉ0 मनमोहन सिंह ने भारतीय विदेश नीति को 21वीं सदी की चुनौतियों के अनुरूप नया स्वरूप प्रदान करने की कोशिश की। उन्होंने विशेष रूप से अमरीकी राष्ट्रपति जार्ज डब्ल्यू बुश के साथ विभिन्न वार्ताओं में भारतीय हितों को स्पष्ट करते हुए भारत की एक अलग तस्वीर स्पष्ट की। परिणामस्वरूप अमरीका ने भारत को एशिया में अपने एक प्रमुख रणनीतिक साझेदार के रूप में मान्यता दी। अमरीकी राष्ट्रपति बुश ने अपनी भारत यात्रा के दौरान अमेरीका द्वारा भारत को संवेदनशील परमाणु सामग्री प्रदान करने के लिए 'नागरिक परमाणु सहयोग समझौते' पर हस्ताक्षर किया। अमरीकी कानून बगैर एनपीटी हालांकि सीटीबीटी पर हस्ताक्षर किए हुए देश से किसी समझौते को करने से रोकते है । परन्तु यह भारत की अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ती हुई शक्ति का ही एक बड़ा प्रमाण है।

वर्तमान में श्री नरेन्द्र दामोदर मोदी देश के 15वें प्रधानमंत्री है। मोदी ने अपने दम पर न सिर्फ भाजपा को सत्ता तक पहुँचाया बल्कि ऐसा बहुमत भी हासिल किया कि वह काम करने और फैसला लेने के लिए किसी के मोहताज नहीं होंगे। वर्ष 2014–15 में अमरीका के साथ भारत की कूटनीति साझेदारी में एक गुणात्मक नई शक्ति का संचार हुआ। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 26–30 सितंबर, 2014 को अमरीका यात्रा की। अमरीकी राष्ट्रपति बराक ओबामा के साथ बैठक के दौरान दोनों देशों के रक्षा सहयोग को 10 वर्ष बढ़ाने, असैन्य परमाणु समझौते को लागू करने की राह की रूकावटे दूर करने और आतंकवाद से लड़ने में परस्पर सहयोग के लिए सहमति बनी। इसके अतिरिक्त आर्थिक सहयोग, व्यापार एवं निवेश सहित व्यापक मुद्दो पर भी चर्चा की। श्री मोदी ने अमरीकी कंपनियों को भारतीय रक्षा क्षेत्र में भागीदारी का भी निमंत्रण दिया। दोनों नेताओं की बैठक के बाद जारी संयुक्त बयान में कहा गया कि भारत क्षेत्र में शांति और सुरक्षा की बड़ी ताकत के रूप में उभर रहा है। प्रधानमंत्री ने कहा कि भारत और अमरीका वैश्विक साझेदार है जो साझा मूल्यों और हितों पर आधारित है। दोनों नेताओं ने एक मंच से पहली बार स्वीकार किया कि दक्षिण चीन सागर पर सबका अधिकार है।

विदेश मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज ने संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा में भाग लेने के लिए और अमेरिका में प्रधानमंत्री के प्रतिनिधिमंडल के सदस्य के रूप में 24 सितंबर से 2 अक्टूबर, 2014 के दौरान अमरीका दौरा किया। प्रधानमंत्री के निमंत्रण पर अमरीकी राष्ट्रपति श्री बराक ओबामा 26 जनवरी, 2015 के गणतंत्र दिवस समारोह पर मुख्य अतिथि के रूप में भारत आए। यह इतिहास में प्रथम बार हुआ है कि चार महीने के अंतराल में दोनों देशों के बीच दो शिखर स्तरीय बैठकें आयोजित हुई है।[17] निःसंदेह इन यात्राओं से भारत–अमरीकी संबंधों का दायरा व्यापक हुआ है।

सारांश

रूप में कहा जा सकता है कि भारत और अमरीका दोनों लोकतांत्रिक देश है और मानवीय स्वतंत्रता, विश्व–शांति आदि के पोषक भी। इन बुनियादी समानाताओं के बावजूद उनके बीच समय–समय पर ऐसे अनेक तनाव बिन्दु उभरे, जिस कारण उनमें घनिष्ठ मैत्री संबंधो की स्थापना का मार्ग कभी प्रशस्त नहीं हो पाया। पाकिस्तान को अमरीकी शस्त्र सहायता, पी0 एल–480 समझौता, यूरेनियम की आपूर्ति रोकना, बांगलादेश मुक्ति अभियान के दौरान अमरीका द्वारा पाकिस्तान का पक्ष लेना, हिन्द महासागर को शांति क्षेत्र बनाने, परमाणु प्रसार रोक सन्धि आदि ऐसे ही अनेक मुद्दे है, जिन्होंने दोनों देशों के बीच संबंधों को कटु बना डाला। दोनों ही देशों के नेतागण शुरू से ही समय–समय पर पारस्परिक संबंधों को सुधारने की दिशा में प्रयत्नशील रहे हैं। किसी भी देश की विदेश नीति उसके राष्ट्रीय हितों के अनुरूप संचालित होती है। यह निश्चित न होकर देशकाल व परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में सदैव बदलती रहती है। यही कारण है कि अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में न तो कोई देश का स्थायी मित्र होता है और न ही स्थायी शत्रु। वर्तमान समय में भारत एक विश्वशक्ति बनने की ओर अग्रसर है। भारतीय विदेश नीति का लक्ष्य भविष्य के लिए एक ऐसी संकल्पना तैयार करना है जो अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत को उचित स्थान दिला सके। अतः भारत अमरीका के साथ अपने संबंधों को सुदृढ़ बना रहा है और राजनीतिक तथा आर्थिक भागीदारी को और अधिक मजबूत और विस्तारित कर रहा है।

संदर्भ ग्रंथ

1. वी0एन0 खन्ना एवं लिपाक्षी अरोड़ा, भारत की विदेश नीति, पृ0 1, चतुर्थ संस्करण, 2008 विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0 लि0 नई दिल्ली
2. Charles P. Schleicher, Internation Relations, P. 103
3. George Modelski, A Theory of Foreign Policy, P. 3
4. J.C. Bandopadhyaya, The Making of Indias Foreign Policy, P. 8
5. James Rosenau, The Scientific study of Foreign Policy, Chapter II
6. डॉ0 पुष्पेश पंत एवं श्रीपाल जैन, भारतीय विदेश नीति नए आयाम, पृ0 198
7. वी0एन0 खन्ना एवं लिपाक्षी अरोड़ा, भारत की विदेश नीति, पृ0 335–36
8. डॉ0 मथुरालाल शर्मा, प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, पृ0 246
9. डॉ0 ब्रजेन्द्र प्रताप गौतम, भारत की विदेश नीति, पृ0 213
10. वी0 एन0 खन्ना एवं लिपाक्षी अरोड़ा, भारत की विदेश नीति, पृ0 347
11. डॉ0 मथुरालाल शर्मा, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, पृ0 214
12. द स्टेट्समेन, 15 मई, 1994
13. इंडियन एक्सप्रेस, 16 मई, 1994
14. भारतीय समाचार पत्र और एजेंसियां, 19 मई, 1994
15. डॉ0 ब्रजेन्द्र प्रताप गौतम, भारत की विदेश नीति, पृ0 226–27
16. वी0 पी दत्त, बदलती दुनिया में भारत की विदेश नीति, पृ0 80
17. भारत 2016 वार्षिक संदर्भ ग्रंथ, पृ0 483, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार